रजि. नं. पी.बी./जे.एल–/0011/2012-14 RNI No. 26281/74

कृण्वन्तो ओ३म् विश्वमार्यम्

साप्ताहिक
आर्य मर्यादा
आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख साप्ताहिक पत्र

वर्ष–71, अंक : 22, 4/7 सितम्बर 2014 तदनुसार 22 भाद्रपद सम्वत् 2071 मूल्य 2 रु०, वार्षिक 100 रु० आजीवन 1000 रु०

वैश्वानर अग्नि का चयन मन से

–ले० स्वामी वेदानन्द (दयानन्द) तीर्थ

वैश्वानरं मनसाग्निं निचाय्या हविष्मन्तो अनुषत्यं स्वर्विदम्।
सुदानुं देवं रथिरं वसूयवो गीर्भी रण्वं कुशिकासो हवामहे।।
–ऋ. 3/26/1

शब्दार्थः हम **कुशिकासः**= ब्रह्मनिष्ठ लोग **हविष्मन्तः** =श्रद्धाभक्तिरूप हवि से सम्पन्न होकर **अनु+सत्यम्**= सत्यानुकूल **स्वर्विदम्**= आनन्द प्रकाश प्राप्त कराने वाले **वैश्वानरम्**= सब मनुष्यों के हितकारी **अग्निम्**= अग्नि का **मनसा**= मन से **निचाय्य**= चयन करके, संग्रह करके, स्थापना करके, धारण करके **सुदानुम्**= उत्तम दानी **रथिरम्** = आत्मा को आनन्द देने वाले **रण्वम्**= रमणीय **देवम्**= भगवान को **वसूयवः**= धनाभिलाषी होकर **गीर्भि**= वाणियों से **हवामहे**= चाहते हैं, बुलाते हैं।

व्याख्या= परमात्मा का एक नाम वसु है। वसु का यद्यपि एक अर्थ धन भी है, परन्तु मूल अर्थ है, बसने की सामग्री। भगवान् ही तो जीव को बसने की सामग्री देता है, अतः सबसे बड़ा और वास्तविक वसु वही है। जिन्हें वसु भगवान की कामना है, वे हैं **वसूयुः**। केवल किसी वस्तु की कामनामात्र से वह वस्तु नहीं मिल जाती, किन्तु उसके लिये श्रद्धा, उत्साह तथा साधन भी चाहिये। वेद की परिभाषा में इन सब को हवि कहते हैं, अर्थात् वसूयु होने के साथ हविष्मान् भी होना चाहिये।

भगवान सुदानु हैं, सबसे उत्तम दानी हैं, अतः धन वहीं से मिलेगा। उसे पुकारना चाहिये। वाणी से पुकार सकते हो, किन्तु वाणी के साथ मन का मेल भी चाहिये। इसीलिये वेद कहता है–**वैश्वानरं मनसाग्निं निचाय्य**–वैश्वानर अग्नि को मन से धारण करके।

वैश्वानर ध्यान से ही प्राप्त होता है, इसको बहुत सुन्दर शब्दों में मुण्डक ऋषि ने समझाया है–

बृहच्च तद्दिव्यमचिन्त्यरूपं सूक्ष्माच्च तत्सूक्ष्मतरं विभाति।
दूरात्सुदूरे तदिहान्तिके च पश्यत्स्विहैव निहितं गुहायाम्।। 7।।
न चक्षुषा गृह्यते नापि वाचा नान्यैर्देवैस्तपसा कर्मणा वा।
ज्ञानप्रसादेन विशुद्धसत्यवस्ततस्तु तं पश्यते निष्कलं ध्यायमानः।। 8।।
एषोऽणुरात्मा चेतसा वेदितव्यः।।9।। **–मुण्डको 3/1/7-9**

वह महान्, दिव्य, अचिन्त्यरूप, सूक्ष्म से भी अधिक सूक्ष्म चमक रहा है। वह दूर से भी सुदूर है, वैसे यहीं पास में है। देखने वालों की तो इसी हृदय गुफा में छिप रहा है। आंख, वाणी से उसका बोध नहीं होता, न ही दूसरी इन्द्रियों से, न ही तप अथवा कर्म से। ज्ञान की विशुद्धि से विमलबुद्धि होकर ध्यान करने वाला उस कलारहित= अखंड को देख पाता है। यह सूक्ष्म आत्मा चित्त=चिन्तन से जानने योग्य है। भगवान को कर्म और ज्ञान भी प्राप्त नहीं करा सकते, दूसरे साधनों का तो कहना ही क्या है। कर्म-ज्ञान के साथ जब ध्यान आ मिलता है तब प्रभु के दर्शन सुलभ हो जाते हैं। आंख आदि इन्द्रियां दूरस्थ पदार्थ के देखने आदि में सहायक हो सकती हैं। किन्तु परमात्मा तो **इहैव निहितं गुहायाम्** हृदय-गुफा में छिपा है। हृदय में पड़ी वस्तु को हृदय से, मन से देखना होगा, अतः वेद ने कहा– **मनसाग्निं निचाय्य** और उपनिषत् ने भी **एषोऽणुरात्मा चेतसा वेदितव्य**= यह आत्मा चित्त से, मन से जाना जा सकता है। उपनिषत् का **ज्ञानप्रसादेन विशुद्धसत्वः** इतना स्पष्ट नहीं हैं जितना वेद का अनुषत्यम्= अनुसत्यम् है। सत्यस्वरूप को सत्यानुसार ही विचारना, धारना चाहिये, अर्थात् जीवन में सत्य का प्रधान स्थान हो।

इस मंत्र में एक विशेष बात कही है, साधकों को उसका विशेष मनन करना चाहिये। वह यह है कि भगवान का ध्यान आवश्यक है। ध्यान में वाग्–व्यापार नहीं होता, ध्यान हृदय से, मन से किया जाता है, जैसा कि वेद (ऋ. 3/26/8) में कहा है। **हृदा मतिं ज्योतिरन् प्रजानन्**= हृदय से मनन, ध्यान करके तदनुकूल ज्योति= आत्म परमात्म प्रकाश को उत्तमता से जान पाता है।

वेद कहता है, ध्यानातिरिक्त समय में वाणी से भी भगवान का स्मरण, कीर्तन करो, तभी तो कहा–**गीर्भी रण्वं कुशिकासो हवामहे**= हम ब्रह्मनिष्ठ लोग उस रमणीय को वाणियों से भी चाहते हैं।

भाव यह कि मनसा, वाचा, कर्मणा भगवान की आराधना करनी चाहिये, क्योंकि वह है–रथिर–रथी=रथवाले आत्मा को रमण कराने वाला। संसार के अन्य पदार्थ इन्द्रियों को, शरीर को, सुख दे सकते हैं, आत्मा को आनन्द इस सुदानु= महादानी वैश्वानर से मिल सकता है। इसीलिये (ऋग्वेद 3/26/2) में कहा–

तं शुभ्रमग्निमवसे हवामहे वैश्वानरं मातरिश्वानमुक्थ्यम्।
बृहस्पतिं मनुषो देवतातये विप्रं श्रोतारमतिथिं रघुष्यदम्।।

उस पवित्र, सर्वनेता, सर्वत्र, विराजमान, अत्यन्त प्रशंसनीय, महाज्ञानी, सबकी सुनने वाले, सर्वस्व, करूणा से शीघ्र आर्द्र होने वाले महाभगवान का, अपने रक्षण तथा देव-प्राप्ति के निमित्त आह्वान करते हैं।

संसार के पदार्थों की परीक्षा कर ली, एक एक को चख कर आत्मा कह उठता है– नात्र भोग्यमस्ति= इसमें आत्मा के भोग योग्य कुछ नहीं हैं। विश्व के सब पदार्थ निरख-परख लिये, आत्मा की भूख नहीं मिटी, उसे जो चाहिये, वह उसे नहीं मिला। उसके कारण वह व्याकुल हो उठा है। अपनी इस दिशा में वह अपने आप को आरक्षित अनुभव करता है। भौतिक पदार्थ उसे अपहरणकर्त्ता के रूप में प्रतीत होने लगे हैं तब उसे सुनाई दिया– **तं शुभ्रमग्निमवसे हवामहे** हम उस वैश्वानर, पवित्र अग्निदेव को अपनी रक्षा के लिये बुलाते हैं, चाहते हैं। इतना ही नहीं उसे सुनाई देता है। बृहस्पतिं मनुषो देवतातये महान् भगवान को मनुष्य के देव प्राप्ति या देवत्व-प्राप्ति के लिये पुकारते हैं। मार्ग मिला। वह श्रोता है, साथ ही रघुष्यद् शीघ्र पिघलने वाला=आशुतोष है। आओ, उसे रिझाएं, पिघलाएं।

–स्वाध्याय संदोह से साभार

महर्षि दयानन्द विनोद प्रिय भी थे

-स्वे० खुशहाल चन्द्र आर्य गोविन्द राम आर्य एण्ड सन्स 180 महात्मा गान्धी रोड (दो तल्ला) कोलकात्ता

महर्षि दयानन्द इतने बड़े त्यागी, तपस्वी, संन्यासी होकर केवल गम्भीर ही नहीं थे बल्कि सभी रसों का रसपान भी करते थे। वे असहाय व निर्बल को देखकर करुणा भाव से भर जाते थे। देश की या किसी व्यक्ति की दयनीय दशा देखकर रात भर रोते थे। किसी दुष्ट या पापी को दण्ड देने के लिए क्रोधित इतने अधिक हो जाते थे, उनको देखकर दुष्ट डर के मारे भयभीत होकर उनके पैरों में पड़कर क्षमा मांगते थे। उनका कण्ठ भी बड़ा मधुर था। मन्त्रों को जब सस्वर बोलते थे या भजन गाते थे तो लोग झूमने लग जाते थे। इन सभी रसों का दिव्यदर्शन उनके जीवन में पग-पग पर होता है। अन्य रसों के साथ-साथ उन्हें मनोरंजन करना भी प्रिय लगता था। यहां उनके जीवन की कुछ घटनाएं लिख रहे हैं जिनसे उनका मनोरंजन स्वभाव का दिग्दर्शन होता है। वे इसी भांति है।

1. यह घटना सन् 1867 की चासी ग्राम की है। पण्डित गंगा प्रसाद जी स्वामी जी के एक श्रद्धालु अनुयायी थे जिस प्रकार स्वामी जी जाटों को, राजपूतों को, बणियों को यज्ञोपवीत देते थे, उनका अनुकरण करके गंगा प्रसाद जी भी उसी प्रकार गांव-गांव में विचरण करते हुए जनेऊ धारण कराते थे। उनके इस कार्य से स्वामी जी बहुत प्रसन्न थे। एक दिन, गंगा प्रसाद जी ने स्वामी चरणों में उपस्थित होकर निवेदन किया कि महाराज! मैंने बहुत बड़ी जनसंख्या को जनेऊ धारण कराए हैं। स्वामी जी ने विनोद भाव से हंसते हुए कहा कि यज्ञोपवीत देते ही जाते हो या किसी का उतारते भी हो ? उसने विनती की-भगवान्! कभी जनेऊ उतारा भी जाता है ? स्वामी जी ने कहा हां, जो जन धर्म-कर्म हीन हो जाए उसके उपवीत (जनेऊ) उतार लेने चाहिए।

2. उसी गांव की घटना है कि पण्डित गंगा प्रसाद का गुरू प्राय: स्वामी जी के पास आया जाया करता था। एक दिन वह स्वामी जी की कुटिया पर अपने वस्त्र रख गंगा तीर पर स्नानार्थ जाने लगा। स्वामी जी ने विस्मयाकार से पूछा कि आपकी भुजा में क्या है? वह बोला महाराज, यह ''अनन्त'' है। स्वामी जी पल भर में उसके पास चले गए और उंगलियों से नाप कर कहने लगे कि यह तो इतने उंगली का है, अनन्त कहां है? उसने लज्जा के मारे यह अनन्त तुरन्त उतारकर गंगा में बहा दिया।

3. स्वामी जी चासी से अनूप शहर पधारे। वहां ठाकुर गिरवर सिंह चांदौख-निवासी स्वामी जी की सेवा में आए। उस समय उनके पास नर्मदा से मंगवाए हुए गोल पिण्ड भी थे। वे उनका प्रतिदिन पूजन किया करते थे। ठाकुर महाशय ने स्वामी जी से पूछा कि क्या शिव पूजा अच्छी है ? स्वामी जी ने उत्तर दिया कि इससे तो चींटियों की पूजा करना अच्छा है, क्योंकि जो नैवेद्य उस पर चढ़ाया जाता है उसे यह बटिया तो नहीं खा सकती परन्तु चींटियों पर चढ़ाओगे तो वे अवश्य खा लेंगी।

4. स्वामी जी महाराज पौष सुदी ६ संवत 1930 तद्नुसार सन् 1873 को अलीगढ़ में आए और राजा जयकृष्ण जी के अतिथि बने। महाराज का शुभागमन सुनकर सहस्रों नगर निवासी तथा आस पास के गांव के लोग उपदेश सुनने आने लगे। सारे नगर में स्वामी जी के प्रचार का प्रभाव था। हिन्दू, मुसलमान, ईसाई सभी सत्संग में आते थे। व्याख्यान के पश्चात् शंका समाधान भी होता था। उसमें रात के दस बज जाया करते थे। स्वामी जी के इस अनथकपन की सभी प्रशंसा करते थे। एक दिन, एक पण्डित मन्दिर के चबूतरे के ऊंचे स्थान पर बैठकर स्वामी जी से शास्त्रार्थ करने लगा। लोगों ने उसके ऊंचे स्थान पर बैठने को बुरा समझा। कई भद्र पुरूषों ने उसे समझाया कि सभ्य पुरूषों की तरह बैठ कर वार्तालाप करो, परन्तु वह ऐसा हठीला था कि वहीं डटा रहा। स्वामी जी ने लोगों से कहा कि कोई हानि नहीं, पण्डित जी वहीं बैठे रहे। केवल ऊंचे आसन से किसी को महत्त्व प्राप्त नहीं होता। यदि ऊंचा आसन बड़ाई का कारण हो तो पण्डित जी से भी ऊंचे वृक्ष पर वह कौआ बैठा है।

5. सन्, 1879 में स्वामी जी कानपुर होते हुए दानापुर पहुंचे। वहां स्वामी जी से एक पुरूष ने प्रार्थना की, ''महाराज! अभ्यास से मन लगाने का बहुत ही यत्न करता हूं, परन्तु मन नहीं लगता। इसके संकल्प विकल्प शान्त ही नहीं होते।''

स्वामी जी ने व्यंग्य तथा विनोद भाव से कहा कि यदि मन नहीं टिकता तो भांग भवानी का एक लोटा और चढ़ा लिया करो।

यह उत्तर सुनकर उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। वह मन ही मन कहने लगा, कि स्वामी जी को तो पता भी नहीं है कि मैं भांग पीता हूं। फिर यह कैसे जान गए ? सच है सत्पुरूषों के सामर्थ्य की कोई सीमा नहीं होती। उनका महात्म्य अगम्य हुआ करता है। इसी प्रकार एक दिन एक अन्य महाशय ने भी निवेदन किया। भगवान्! उपासना में चंचल चित्त को टिकाने के लिए किसी योग-क्रिया का उपदेश दीजिए।

स्वामी जी ने पहले वाले भाव से ही शिक्षा दी कि एक विवाह और कर लो, फिर चित्त आप ही स्थिर हो जाएगा। यह उत्तर सुनकर, वह व्यक्ति अति लज्जित और विस्मित हुआ। लज्जा तो उसे इसलिए आई कि एक स्त्री के जीते जी उसने दूसरा विवाह कर लिया था और आश्चर्य इसलिए हुआ कि बिना बताए, महाराज को इसका ज्ञान हुआ तो कैसे हुआ।

6. यह घटना सन् 1872 की है। स्वामी जी सायंकाल 8 बजे पटना से चलकर, गाड़ी रात के बारह बजे जमालपुर जंक्शन पर पहुंची। उस समय मुंगेर को जाने वाली गाड़ी के छूटने में एक घण्टा शेष था। स्वामी जी पटना की गाड़ी से उतर कर वहीं जमालपुर स्टेशन के आंगन में टहलने लग गए। उस समय वहां एक अंग्रेज इंजीनियर प्रोत्साहित खड़ा था। उस इंजीनियर की पत्नी ने कौपीन मात्र धारी एक परमहंस को अपने सामने घूमता देखकर बुरा माना। इंजीनियर महाशय ने तुरन्त जाकर स्टेशन मास्टर से कहा, ''यह कौन नंगा टहल रहा है ? इसे इधर-उधर घूमने से बन्द कर दो।'' स्टेशन मास्टर ने महाराज को अति विनीत भाव से कहा, ''भगवन्! दूसरी ओर चलकर कुर्सी पर आराम कीजिए। मुंगेर की गाड़ी के जाने में अभी बड़ी देर है।''

स्वामी जी पहले ही सब कुछ समझ गए थे। इसलिए उन्होंने स्टेशन मास्टर से कहा, जिस महाशय ने मुझे हटा देने के लिए आपको यहां भेजा है, उसे जाकर कह दीजिए कि हम उस युग के मनुष्य हैं, जिस युग में बाबा आदम और माता हव्वा, अदन उद्यान में, नग्न घूमने में किंचित् भी लज्जा नहीं करते थे। महाराज ने टहलना पहले की भांति ही जारी रखा। इंजीनियर ने स्टेशन मास्टर को पुन: बुलाकर अपना आदेश दोहराया। इस पर स्टेशन मास्टर ने कहा कि महाशय यह कोई साधारण व्यक्ति नहीं है, जिसे मैं आंगन से निकाल दूं। यह तो हम और आप जैसों को कुछ भी न समझने वाला एक स्वतन्त्र सन्यासी है। तब इंजीनियर ने स्वामी जी का श्री नाम पूछा। इस पर स्टेशन मास्टर ने कहा कि इनका नाम दयानन्द सरस्वती है। इंजीनियर महाशय यह कहता हुआ कि क्या ये प्रसिद्ध सुधारक दयानन्द सरस्वती है, तत्काल उठ खड़ा हुआ और स्वामी जी के समीप जाकर उसने विनीत भाव से नमस्कार किया, और कहा, ''चिरकाल से मेरे चित्त में आपके दर्शनों की अभिलाषा थी। यह मेरा सौभाग्योदय है कि यहां आपके दर्शन हो गए हैं।''

इस लेख में स्वामी जी ने वैदिक संस्कृति को ध्यान में रखते हुए आदम और हव्वा को बाबा आदम और माता हव्वा कहकर सम्बोधित किया है। बाकी हर स्थान पर आपको आदम और हव्वा ही पढ़ने को मिलेगा। यह हमारी ही एक वैदिक संस्कृति है जो दूसरे मतों के महान् व्यक्तियों को भी सम्मानित शब्दों में सम्बोधित करना सिखाती है।

सम्पादकीय.....

नारी जाति की वर्तमान स्थिति

वैदिक सभ्यता में नारी का बड़ा मान है। यह मातृशक्ति है। इसे देवी, श्री, लक्ष्मी, जननी तथा अम्बा आदि पवित्र नामों से पुकारा गया है। नारी वेद के शब्दों में संसार को पुकार कर स्वयं कहती है- **अहं केतुरहं मूर्धा अहं विवग् विवाचिनी। मम पुत्राः शत्रुहणः।।** अर्थात् मैं समाज की पताका हूं। मैं मस्तक हूं तथा मैं सबको जीवन उपदेश करने वाली हूं। मेरे पुत्र शत्रु का नाश करने वाले हैं तथा मेरी पुत्री विचारों का प्रकाश देने वाली है। नारी की कितनी वीर भरी गर्जना है। महात्मा मनु ने मनुस्मृति में कहा है-

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते तत्र सर्वाफला क्रियाः।।

जिस परिवार देश और नगर में नारी जाति का पूजन एवं मान होता है वहां देवता रमण करते हैं। जहां पर इनका मान सम्मान नहीं होता वहां सारे कार्य निस्सार तथा बेकार हो जाते हैं। मातृशक्ति का सम्मान राष्ट्र का उत्थान तथा इनका अपमान राष्ट्र का पतन है। माता को राष्ट्रनिर्माता के नाम से पुकार कर मातृजगत् का वन्दन किया जाता है। भारत को भी इसीलिए भारत माता कहा गया है। माता सचमुच विचारों का, जीवन का तथा समाज का निर्माण करने वाली है। कौन है जिसका मस्तक लोपामुद्रा, रोमशा, गोधा एवं दूसरी मन्त्रार्थों का गम्भीर दर्शन करने वाली माताओं के सामने नहीं झुकता? कौन सरस्वती, गार्गी, मैत्रेयी, लीलावती, दुर्गा, मदालसा, दमयन्ती, सीता, रूक्मिणी आदि विदुषी और वीरता से भरी देवियों का वन्दन नहीं करता? किसके शरीर में जीजाबाई, लक्ष्मीबाई आदि वीर माताओं के वीररस पूर्ण कार्यों को स्मरण कर नवीन जीवन धारा का संचार नहीं हो जाता? सचमुच ही मातृशक्ति धन्य है। नारी में वीरता, कला, विद्या, निर्माण शक्ति, क्रान्तिमय विचार तथा स्नेह का स्रोत भरा होता है। भारत को तो अपने इस मातृजगत् पर सदा से ही गर्व रहा है।

समय बदलता रहता है। समय के साथ-साथ नारी की स्थिति में भी परिवर्तन आ गया। भारत की मातृशक्ति देवियों ने भी आत्मज्ञान तथा आत्मसम्मान की भावना भुला दी। कुछ पुरूष समाज की स्वछन्द एवं संकीर्ण मनोवृत्तियों ने नारी के प्रति दूषित भाव प्रचारित कर दिए। मध्य युग में माता चारदीवारी में बन्द कर दी गई। किसी ने इसे नरक का द्वार कहा तो किसी ने पैर की जूती कह दिया। राष्ट्र निर्माता माता भोग विलास का निवास, मनोरञ्जन का साधन बना दी गई। मध्य युग में नारी जाति पर बहुत से अत्याचार किए गए। बाल विवाह, सती प्रथा, दहेज प्रथा के कारण नारी के ऊपर बहुत से अत्याचार किए गए।

आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने नारी जाति के लिए कितना काम किया, नारी को कितना सम्मान दिलाया यह किसी से गुप्त नहीं है। आर्य समाज ने हमेशा नारी के लिए आवाज उठाई। परन्तु आज फिर वर्तमान समय में नारी जाति की वहीं स्थिति है। भले ही नारी ने सभी क्षेत्रों में बहुत उन्नति की है, पुरूषों के साथ हर क्षेत्र में कन्धे से कन्धा मिलाकर काम कर रही है, सफलता की अनेक बुलन्दियों को छू रही है, डॉक्टर बनकर, इन्जीनियर बनकर, नेता बनकर, अध्यापक बनकर, सैनिक बनकर देश की सेवा कर रही है परन्तु फिर भी नारी के प्रति अपराध कम नहीं हो रहे हैं। आज जब हम समाचार पत्र को पढ़ने के लिए बैठते हैं तो नारी के ऊपर हो रहे अत्याचारों को देखकर माथा शर्म से झुक जाता है। कहीं पर बलात्कार हो रहा है, कहीं कम दहेज लाने के कारण प्रताडित किया जाता है, कहीं भ्रूण हत्या के द्वारा जन्म लेने से पहले ही खत्म कर दिया जाता है, कहीं सहकर्मियों के द्वारा शोषण किया जाता है। हर क्षेत्र में नारी को प्रताडित किया जाता है और फिर ऊपर से नेताओं की बयानबाजी शुरू हो जाती है। इस दिशा में कोई ठोस कदम उठाने के बजाय वे ऐसे बयान देते हैं कि सुनने वाले को शर्म आती है। कोई कहता है कि लड़को से गलती हो जाती है, कोई कहता है कि जब तक दुनिया रहेगी तब तक बलात्कार होते ही रहेंगे, कोई कहता है लड़कियों को अकेले नहीं घूमना चाहिए। महिलाओं के प्रति बढ़ते अपराधों के लिए पुरूषों की संकीर्ण सोच भी जिम्मेदार है। इन सभी बढते अपराधों को देखकर मन सोचने पर मजबूर हो जाता है कि जिस देश में नारी की पूजा की जाती थी, जिसे राष्ट्रनिर्माता कहा जाता था, जिसे लक्ष्मी का रूप समझा जाता था और जो हमारे भारत का गौरव थी उसके प्रति मनुष्य की सोच में इतना बदलाव कैसे आ गया।

नारी के प्रति ऐसी सोच का मुख्य कारण यह है कि आज राष्ट्र में नारी के शरीर को, उसके वेश और केश को, कला को बाजार की वस्तु बनाकर अनाचार का प्रचार किया जा रहा है। आज केवल धन कमाने की इच्छा से अनेक वस्तुओं पर नारी को आकर्षक रूप में पेश किया जाता है। किसी भी उत्पाद की सफलता की गारंटी नारी को माना जाता है। नारी को इस रूप में सजाकर पेश किया जाता है जिससे वह केवल बाजार की वस्तु बन गई है। अनेक विज्ञापनों के माध्यम से नारी की सुन्दरता को पेश किया जाता है। आज नारी को श्रृंगार के बाजार का हार बना दिया गया है। आज जब कभी मेले में अपने देश की पुत्रियों, बहिनों के विलासमय नाच को दिखाया जाता है तो मन में विचार आता है कि राष्ट्र का निर्माण करने वाली मातृशक्ति का इतना अपमान क्यों? क्या नारी केवल विषय भोग की वस्तु बन कर रह गई है? क्या नारी की सुन्दरता केवल टी.वी. में विज्ञापनों के द्वारा दूसरों को लुभाने के लिए, अपनी ओर आकर्षित करने के लिए रह गई है? राष्ट्र निर्मात्री मातृशक्ति के प्रति इस दूषित धारणा ने कैसे जन्म लिया? क्यों आज कन्याओं की भ्रूण में ही हत्या कर दी जाती है? क्यों आज बलात्कार की घटनाएं दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही हैं? क्यों आज दहेज के कारण उसे प्रताड़ित किया जाता है? नारी की देवी के रूप में, शक्ति के रूप में पूजा करने वाला देश उसके साथ जघन्य कृत्य क्यों कर रहा है? आज इस पर गम्भीर चिन्तन करने का समय आ गया है।

बन्धुओं आज नारी की इस वर्तमान स्थिति को ठीक करने के लिए इस दिशा में कठोर प्रयास करने की तथा मानसिकता को बदलने की आवश्यकता है। केवल बयानबाजी तथा कानून द्वारा बलात्कार जैसे जघन्य अपराधों से निपटा नहीं जा सकता। बलात्कार जैसे जघन्य कृत्य करने वालों को तुरन्त फांसी की सजा मिलनी चाहिए। आज जब भी कोई ऐसी घटना घटित होती है तो सरकार का ध्यान इस ओर जाता है और अपनी कुर्सी को बचाने के लिए तुरन्त कानून बना दिया जाता है ताकि उन पर कोई उंगली न उठा सके परन्तु उस कानून का सख्ती से पालन नहीं किया जाता। अगर सख्ती से पालन होता तो दिल्ली के दामिनी दुष्कर्म कांड के सभी दोषियों को आज तक फांसी की सजा हो चुकी होती। इसके साथ ही जब तक पुरूषों की मानसिकता में परिवर्तन नहीं होगा, कानूनों का सख्ती से पालन नहीं होगा तब तक ऐसे अपराधों को रोका नहीं जा सकता। आज आवश्यकता है कि नारी फिर से राष्ट्र का गौरव बनें। आज फिर गार्गी, मैत्रेयी, लोपामुद्रा, लीलावती, मदालसा जैसी विदुषी तथा जीजाबाई, लक्ष्मीबाई, दुर्गा जैसी वीर देवियों की आवश्यकता है। आज की नारी भी गौरव से कह सके कि मैं समाज की पताका हूं, मस्तक हूं तथा मैं सबको जीवन उपदेश करने वाली हूं। नारी अगर स्वयं विदुषी तथा वीर होगी तो वह अपनी संतान को भी वीर और विद्वान् ही बनाएगी। नारी जब स्वयं वीर और विदुषी बनकर अपनी संतान का निर्माण करेगी तभी राष्ट्र की उन्नति की कल्पना कर सकते हैं।

-प्रेम भारद्वाज संपादक एवं सभा महामन्त्री

वेदों का जन सामान्य का प्रचार व प्रसार

-ले० मनमोहन कुमार आर्य, 196 चुक्खूवाला-2, देहरादून

वेदों के जन-सामान्य में प्रचार करने से पूर्व हमें वेदों के महत्त्व व इनकी आज के समय में प्रासंगिकता को जानना व समझना है। संक्षेप में वेदों के बारे में कहें तो वेद का अर्थ ज्ञान व जानना होता है। वेदों के नाम से चार पुस्तकें अथवा संहिताएं मिलती हैं जो ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद के नाम से प्रसिद्ध है। इनका लेखक कोई मनुष्य नहीं है। परम्परा से इन्हें ईश्वरीय ज्ञान स्वीकार किया जाता है। महर्षि दयानन्द के सामने भी यह प्रश्न उपस्थित हुआ कि क्या वेद ईश्वरीय ज्ञान है ? उन्होंने इसका गहन चिन्तन किया। वह वेदों के पारदर्शी विद्वान थे। देश भर का उन्होंने भ्रमण किया था और देश के सभी ज्ञानी व धार्मिक विद्वानों से उनका सान्निध्य रहा व उन्होंने सबसे वार्तालाप किया। उन्हें अपने भ्रमण में जाकर कहीं धर्म से सम्बन्धित कोई प्राचीन संस्कृत या अन्य किसी भाषा में ग्रन्थ मिलते थे तो वह उनका अध्ययन करते थे। इसके साथ ही महर्षि दयानन्द उच्च कोटि के योगी भी थे। उन्हें समाधि सिद्ध थी और वह प्रातः व रात्रि में समाधि में ईश्वर का साक्षात्कार किया करते थे। उनको यह भी सुविधा थी कि जिन प्रश्नों के उत्तर उन्हें उपलब्ध ग्रन्थों में नहीं मिलते थे उन्हें वह समाधि में ईश्वर से जान लेते थे। इस प्रकार से उन्होंने वेदों के बारे में सभी प्रकार के प्रश्नों का समाधान प्राप्त किया था। उनका निष्कर्ष था कि वेद सृष्टि की आदि में ईश्वर के चार ऋषियों अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा को प्राप्त ज्ञान है जो सब सत्य विद्याओं से युक्त हैं। उन्होंने परीक्षा कर इस तथ्य को सत्य पाया था। वेदों का ज्ञान ईश्वर से मनुष्यों को कैसे प्राप्त हुआ इसका समाधान उन्होंने अपनी विश्व प्रसिद्ध पुस्तक ''सत्यार्थ प्रकाश'' में सविस्तार किया है। यहां इतना कहना ही समीचीन है कि ईश्वर जीवात्मा के भीतर भी अपने सर्वान्तर्यामी स्वरूप से हर देश व काल में विद्यमान रहता है और प्रेरणा द्वारा वह जीवात्माओं को ज्ञान देता है। जो जीवात्माएं जितनी अधिक पवित्र होंगी, ईश्वर की प्रेरणा को समझना उनके लिए उतना ही सरल होता है। चारों ऋषि अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा पवित्रतम् जीवात्माएं थीं, अतः उन्होंने ईश्वर द्वारा प्रदत्त ज्ञान को प्राप्त कर उन्हें अपनी आत्माओं में स्थिर कर सुरक्षित रूप से धारण कर लिया। इन वेदों में मनुष्य जीवन के प्रत्येक पहलू पर बहुत उपयोगी ज्ञान दिया गया है। इस वेद ज्ञान से मनुष्य की सम्पूर्ण आध्यात्मिक व भौतिक उन्नति होती है। अतः इसका मानव मात्र में प्रचार किया जाना अति आवश्यक व समीचीन है। वेदों का महत्त्व इस कारण भी है कि संसार के सभी मत सम्प्रदाय मनुष्यों को समीप लाने के स्थान पर एक दूसरे से दूर कर रहे है। अपने स्वार्थ के लिए मनुष्यों में साम्प्रदायिकता का विष घोलते हैं। दूसरे मत के लोगों का धर्मान्तरण करने के मंसूबे रखते हैं। ऐसे मत भी हैं जो येन-केन प्रकरेण धर्मान्तरण के लिए सब कुछ जायज मानते हैं जिसमें प्रलोभन, डर, भय व तलवार का प्रयोग भी सम्मिलित है। इतिहास में इसके अनेकों उदाहरण हैं। दूसरी ओर आम जनता भोली होने के कारण इन मत-पन्थों के गुरूओं के जाल में फंस जाती है और उसका लोक व परलोक दोनों नष्ट हो जाता है।

लोगों के द्वार व निवास तक वेदों को पहुंचाना समय की आवश्यकता है। महर्षि दयानन्द का यही स्वप्न था जिसे आर्य समाज व उनके अनुयायियों को सफल करना है। आम आदमी के पास धर्म-कर्म को जानने व समझने के लिए समय नहीं है। अतः आवश्यकता है कि वेद प्रचारक उसके जन-सामान्य के दरवाजे पर पहुंचे। इसके लिए आर्य समाज के सदस्यों को मोहल्ला, झुग्गी-झोंपड़ी व कालोनी प्रचार का कार्यक्रम बनाना चाहिए। रविवार को सत्संग के बाद आर्य समाज के सदस्य टोलियां बना कर किसी गली मोहल्ले या झुग्गी झोंपड़ियों में निकल जाएं। उनके पास पर्याप्त संख्या में प्रचार सामग्री अर्थात् सत्यार्थ प्रकाश व लघु पुस्तकें होनी चाहिए। वह किसी मोहल्ले में जाकर एक-एक कर प्रत्येक व्यक्ति के घर पर जाएं और वेद के महत्त्व को बताएं। उन्हें बताएं कि कब सोना व सोकर उठना है तथा दिन के समय का विभाजन छोटे व बड़े लोगों का किस प्रकार का होना चाहिए। उन्हें स्वाध्याय का महत्त्व बता कर स्वाध्याय किन-किन पुस्तकों का करना चाहिए, यह भी बताना होगा। अच्छे स्वास्थ्य के लिए समय पर सोना और जागना अनिवार्य है। भोजन शुद्ध शाकाहारी व पुष्टिकारक होना चाहिए। यथासम्भव दूध व फलों का प्रयोग भी करना चाहिए। भोजन में हरी तरकारियां अवश्य लेनी चाहिए। प्रातः सायं सन्ध्या करनी चाहिए और सन्ध्या व अग्निहोत्र-हवन की विधि की पुस्तक उन्हें देकर उसका प्रदर्शन व डैमो भी देना चाहिए। उन्हें यह हृदयगंम कराना है कि सत्यार्थ प्रकाश, आर्याभिविनय आदि ग्रन्थों के स्वाध्याय से उनका ज्ञान बढ़ेगा और इससे उन्हें अपने जीवन के सभी पक्षों को सफल सिद्ध करने में सहायता मिलेगी। उन्हें आत्मीयता के साथ आर्य समाज का सदस्य बनने की प्रेरणा दी जानी चाहिए। यह शिक्षा भी उन्हें देनी है कि मनुष्य जन्म से नहीं अपितु अपने कर्मों से महान बनता है। हममें से कोई भी राम, कृष्ण, दयानन्द आदि बन सकता है। इस प्रकार से जन-सामान्यों व उनके परिवारों में जाकर उन्हें शिक्षित करना है। आर्य समाज के सदस्यों का यह भी कर्त्तव्य है कि वह साप्ताहिक या पाक्षिक रूप से उनसे मिलते रहें और उनका कुशल-क्षेम पूछने के साथ उनकी दिनचर्या भी जानकर उसमें अपना परामर्श आदि देकर उनके उत्थान का प्रयत्न करते रहें। यह ध्यान में रखना है कि वह व्यक्ति आर्य समाज में जुड़ा रहे। यदि सम्भव हो तो मोहल्ले में ही साप्ताहिक सत्संग हेतु आर्य समाज की एक इकाई का गठन कर देना चाहिए और मुख्य आर्य समाज का एक प्रतिनिधि उस पर निगरानी रखते हुए उसकी प्रगति की समीक्षा करता रहे। उपदेश, प्रवचन, मौखिक प्रचार व साहित्य का वितरण, यही सबसे अधिक प्रभावशाली प्रचार के साधन हैं, इनका हमें उपयोग करना है। ऐसा करने पर स्थिति में सकारात्मक परिवर्तन अवश्य आएगा।

सबसे बड़ी बात यह है कि हमें आशावादी बन कर प्रचार करना है तथा निराशा के विचारों को किंचित स्थान नहीं देना है। दीप से दीप जले की भांति यदि हमने एक या अधिक व्यक्तियों को प्रभावित कर दिया तो इससे आर्य समाज के वेद प्रचार के कार्यों को बल मिलेगा और देश व समाज की तस्वीर बदलेगी।

सुविचार

1. जब हम छोटी-छोटी बातों पर ध्यान देते हैं, तो महान उन्नति होती है परन्तु महान उन्नति, कोई छोटी बात नहीं है।

2. कार्यों को छोटा मानकर उपेक्षा न करें। ये छोटे-छोटे कार्य ही कल बड़ी सफलता दिलाएंगे।

3. सफलता दौड़ के अंतिम कदम से ही नहीं मिलती, बल्कि प्रत्येक कदम का उसमें योगदान होता है। इसलिए प्रत्येक कदम सोच-समझ कर सही रखें और जीतें

-स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक, रोजड़

कुछ उपनिषदों से (बृहदारण्यक उपनिषद्)

-ले० डा० सुशील वर्मा गली मास्टर मूल चंद वर्मा, फाजिल्का

पिछले अंक में आपने याज्ञवल्क्य एवं गार्गी के सम्वाद के माध्यम से देवताओं के विषय में ज्ञान अर्जित किया। यह तो एक स्थापित तथ्य है कि हमारी संस्कृति नारी जाति के सम्मान, उनकी विद्वता, श्रेष्ठता एवं शालीनता से सुशोभित रही है। इस अंक में बृहदारण्यक उपनिषद् के ही द्वितीय अध्याय के चौथे ब्राह्मण में याज्ञवल्क्य एवं उनकी पत्नी मैत्रेयी का सम्वाद प्रस्तुत किया गया है जो अपने आप में बहुत शिक्षाप्रद एवं हितकारी है। ऋषि ने गृहस्थाश्रम के पश्चात् अपनी इच्छा अपनी पत्नी (मित्रा की पुत्री) मैत्रेयी से प्रकट की। उन्होंने कहा कि मैत्रेयी वह गृहस्थ छोड़ने से पहले चाहता है कि कात्यायनी (याज्ञवल्कय की दूसरी पत्नी) से अपनी सम्पति आदि का निपटारा करवा दूं ताकि बाद में कोई विवाद न हो। मैत्रेयी बहुत ही बुद्धिमत्ती, सूझवान एवं विदूषी थी तो उसने फौरन कहा कि यदि यह सारी पृथ्वी वित्त से पूर्ण होकर मेरी हो जाए तो क्या मैं अमर हो जाऊंगी ? ''कथं तेन अमृता स्याम''

प्रत्युत्तर में याज्ञवल्क्य कहते हैं, ''नहीं, उस अवस्था में जैसे कोई सम्पन्न, साधन युक्त व्यक्ति चैन से जीवन निर्वाह करता है उसी प्रकार ही तुम्हारा जीवन होगा। धन धान्य से अमरता पाने की आशा नहीं की जा सकती।''

''अमृतत्वस्य तु न आशा अस्ति वित्तेन''

ठीक इसी प्रकार का उपदेश कठोपनिषद् में भी वर्णित है ''न वित्तेन तर्पणीयो मनुष्य:'' मनुष्य धन से तृप्त नहीं हो सकता। ऐसा उत्तर पा कर मैत्रेयी फिर कहती है कि जिससे मैं अमर न हो सकूं, उसे लेकर मैं क्या करूंगी।

''येन अहं न अमृतास्याम किमहं तेन कुर्याम्''

यही है भौतिकवाद से छुटकारा, अन्यथा तो धन की लालसा किसे नहीं होती। आज सभी प्राणी इसी धन एवं भौतिक सुखों के पीछे भाग रहे हैं। एक अनथक प्रयास जारी है इसे प्राप्त करने में चाहे वह प्रयास कितना भी अनैतिक क्यों न हो।

परन्तु मैत्रेयी तो याज्ञवल्क्य से अमर होने का उपदेश चाहती है। यह उपदेश ही वास्तव में हमारे जीवन का रहस्य है, एक यथार्थ वास्तविकता है, जिसने हमें अमरत्व को प्राप्त कर सकते हैं। यह सन्देश है भारतीय संस्कृति के स्वरूप का, जिसने भौतिकवाद को नहीं अपितु अध्यात्म को श्रेष्ठ माना।

याज्ञवल्क्य कहते हैं, ''अरे, पति की कामना के लिए पति प्रिय नहीं होता, अपने आत्मा की कामना के लिए पति प्रिय होता है। पत्नी की कामना के लिए पत्नी प्रिय नहीं होती है। पुत्रों की कामना के लिए पुत्र प्रिय नहीं होते, वित्त की कामना के लिए वित्त प्रिय नहीं होता, ब्रह्म शक्ति की कामना के लिए ब्रह्म प्रिय नहीं होता, क्षात्र शक्ति की कामना के लिए क्षत्र प्रिय नहीं होता, लोकों की कामना के लिए लोक प्रिय नहीं होते, देवों की कामना के लिए देव प्रिय नहीं होते, भूतों की कामना के लिए भूत प्रिय नहीं होते, अपितु इन सबके प्रति अपने आत्मा की कामना के लिए यह सब कुछ प्रिय होता है। जिस आत्मा के लिए यह सब प्रिय होता है, अरे वह आत्मा ही तो द्रष्टव्य है, श्रोतव्य है, मन्तव्य है, निदिध्यासितव्य है। उसी को देख, उसी को सुन, उसी को जान, उसी का ध्यान करें। आत्मा के ही देखने से, सुनने से, समझने से, जानने से, सब ग्रन्थियां अर्थात् गांठें खुल जाती हैं।''

''आत्मा वा अरे द्रष्टव्य: श्रोतव्य मन्तव्य: निदिध्या-सितव्य:।''

अत: यह आत्मा ही है जो देखने, सुनने, समझने व ध्यान करने योग्य है। इससे आगे वे कहते हैं कि अपने भीतर की आत्मा के अतिरिक्त कुछ नहीं है। जो ब्रह्म शक्ति को आत्मा से भिन्न जानता है, उसे ब्रह्म शक्ति त्याग देती है, इसी प्रकार क्षात्र शक्ति, लोक, देव, भूत आदि सभी आत्मा के कारण ही है। आत्मा ही ब्रह्म शक्ति है, यही क्षत्र शक्ति है यही लोक है, यही देव है, यही भूत है। यह आत्मा ही सब कुछ है। इसलिए इसी की कामना के लिए सब प्रिय होता है, इसलिए आत्मा को ही जानो। साधारण जीवन में भी हम यदि किसी के लिए कुछ अच्छा व प्रिय कार्य करें तो हमारे मुख से यही शब्द निकलते हैं कि मेरी तो आत्मा प्रसन्न हो गई और जो पाने वाले होता है वह भी कहता है कि मेरी तो आत्मा प्रसन्न हो गई, तृप्त हो गई। कई दिनों से भूखे को खाना खिलाकर देख लेना, किसी असहाय की सहायता करके देख लेना, यही उत्तर मिलेगा।

इसी आत्मा के विषय में याज्ञवल्क्य कहते हैं कि यदि संसार को पकड़ना हो तो इन्द्रियों को पकड़ लो और उससे बढ़कर आत्मा को पकड़ लो। इसके लिए वे शंख, दुन्दुभि एवं वीणा का उदाहरण देते हैं कि इनके द्वारा निकलने वाली आवाज नहीं अपितु उसे बजाने वाली आत्मा को पकड़ लो। जिस प्रकार गीली लकड़ियां जलाई जाए तो आग से अलग धुआं बाहर निकल पड़ता है। अरे मैत्रेयी, इसी प्रकार इस महान भूत, महान शक्ति आत्मा का यह नि:श्वास है, बाहर की ओर लिया गया सांस है।

जैसे सब जल समुद्र को पहुंचते हैं, सब स्पर्श त्वचा को, सब गन्ध नासिका को, सब रस जिहवा को, सब रूप चक्षु को, सब शब्द श्रोत को, सब संकल्प मन को, सब विद्या हृदय को, सब कर्म हस्त को, सब आनन्द उपस्थ को, सब विसर्ग पायु को, सब गति पावों को। वैसे ही सब वेद, इतिहास आदि वाणी को पहुंचते हैं। और वाणी आत्मा द्वारा विकसित होती है। इसलिए आत्मा ही से सृष्टि के सम्पूर्ण प्रवाह का प्रसार है। आत्मा से ही सब कुछ जाना पहचाना जाता है। परन्तु जब आत्मा को भूतों से अलग कर दिया जाए तब उसकी संज्ञा नहीं रहती, उस समय वह अपने निर्वचनीय रूप में जा पहुंचता है, नष्ट नहीं होता।

यथार्थ में यदि चिन्तन करें तो वास्तविकता यही प्रकट होती है। अन्त: करण क्या है, मन, बुद्धि, चित्त एवं अहंकार। ये चारों ही जड़ हैं, यदि जड़ है तो चिन्तन कैसे करें ? निर्णय कैसे ले ? मनन कैसे करे ? चेतनता कैसे जागृत होती है ? और अहं कैसे स्थापित होता है ? केवल मात्र आत्मा के द्वारा ही यह सब सम्भव है। यदि आत्मा है तो इन चारों में चेतनता आती है। सक्रियता का संचालन होता है। यदि आत्मा निर्बल हो जाए, शरीर का साथ छोड़ दे तो सभी इद्रियां सभी सामर्थ्य, सभी चेतनाएं समाप्त हो जाती हैं। वह भूत मृत्त संज्ञक हो जाता है। वह आत्मा अपने निर्वचनीय रूप में पहुंच जाती है, परन्तु वह नष्ट नहीं होती। आत्मा का शरीर के साथ सम्बन्ध ही जन्म है और आत्मा का शरीर से विच्छेद मृत्यु। इसी का अनुमोदन करते हुए कठोपनिषद् में कहा गया है।

''न जायते म्रियते वा विपश्चिन्नायं कुतश्चिन्न बभूव कश्चित्।

अजो नित्य: शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे॥''

-कठ 2/18

यही गीता में भी कहा गया है-

न जायते म्रियते वा कदाचित नायं भूत्वा भविता वा ना भूय:।

अजो नित्य: शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे॥

-कठ 2/20

सारांश यही कि आत्मा से ही सृष्टि के सम्पूर्ण प्रवाह का प्रसार है। आत्मा ही अमृत है, आत्मा ही ब्रह्म है, आत्मा ही सब कुछ है और इसी को ब्रह्म विद्या अथवा मुध-विद्या का नाम से पुकारा जाता है। जिसका विस्तृत वर्णन इसी उपनिषद् के इसी अध्याय के पांचवें ब्राह्मण में किया गया है।

आगे के अंक में 'ख', 'द' हृदय तथा सत्य (भू: भुव: स्व:) के अर्थ का चिन्तन करेंगे।

स्वाध्याय के लाभ

-ले० स्वामी दीक्षानन्द सरस्वती

आत्माभ्युदय के लिए-

स्वाध्याय से मनुष्य में एक प्रवृत्ति जागती है-अन्तर्मुख होने की। उसके सामने एक और ही दुनिया खुलने लगती है। यहां तक कि अन्तर्लोक से बहिर्लोक में लौट आने पर भी 'प्रवृत्ति' तो अब छूट नहीं सकती। अब वह बाहर भी वस्तु की तह तक पहुंचने का यत्न करेगा। इस प्रकार स्वाध्याय के दो लाभ हुए : 1. आत्म-बोध, 2. अपनी सीमाओं से विमुक्त होकर लोकोपकार में अभिरति।

आत्मबोध के साथ हम विषय का विवेचन आरम्भ करते हैं, किन्तु यहां भी हमारे लिए प्रमाण निजी 'आत्मानुभूति' न होकर याज्ञवल्क्य की परम्परा होगी। याज्ञवल्क्य कहते हैं-

अथातः स्वाध्याय-प्रशंसा। प्रिये स्वाध्याय-प्रवचने भवतो, युक्तमना भवति, अपराधीनोऽहरहरर्थान्साधयते, सुखं स्वपिति, परमचिकित्सक आत्मनो भवति, इन्द्रियसंयमश्चैकारामता च प्रज्ञा वृद्धिर्यशो लोक-पक्तिः, प्रज्ञा वर्धमाना चतुरो धर्मान् ब्राह्मणमभि-निष्पादयति। ब्राह्मण्यं, प्रतिरूपचर्या, यशो लोकपक्तिं लोकः पच्यमानश्चतुर्भिर्धर्मैर्ब्राह्मणं भुनक्ति, अर्चया च दानेन चाज्येयतया चावध्यतया च।

-शतपथ० ११।५।७।१

क-१-युक्तमना भवति-

व्यक्तियों की सबसे बड़ी एक ही कठिनाई है कि मन एकाग्र नहीं हो पाता। जिसे सुनो यही कहते पाओगे कि मन बड़ा चंचल है। एक क्षण को भी नहीं टिकता। यदि यह किसी प्रकार काबू आ जाए, तो समस्त कार्य सिद्ध हो जाएं। गीता ६।३४ में अर्जुन ने भी अपनी कठिनाई को इन शब्दों में व्यक्त किया है-

चञ्चलं हि मनः कृष्ण! प्रमाथि बलवद् दृढम्।
तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम्॥

हे श्रीकृष्ण! मन अत्यन्त चंचल है। इन्द्रियों को मथ देने वाला अत्यन्त बलवान् और दृढ़ है। उसका निग्रह वैसा ही दुष्कर है, जिस प्रकार वायु का निग्रह। अर्थात्, सब सफलताओं की सफलता, सब योगों का योग मनोनिग्रह है। शतपथकार स्वाध्याय के लाभों में सर्वप्रथम लाभ मनोनिग्रह ही बताते हैं। उन्होंने लिखा है कि स्वाध्याय से सर्वप्रथम व्यक्ति ''युक्तमना भवति'' समाहित मन वाला हो जाता है, स्थिरचित्त हो जाता है।

जिसे गीताकार ने स्थितप्रज्ञ कहा है, उस शतपथकार ने युक्तमनाः कहा है। वास्तव में देखा जाए, तो स्थित शब्द की अपेक्षा, 'युक्त' शब्द अधिक महत्त्वपूर्ण जंचता है, क्योंकि स्थित शब्द में तो किसी वस्तु के ठहर जाने का भाव अन्तर्निहित है, किसी चीज़ का ठहर जाना, रूक जाना, उत्तम नहीं, जितना कि उसका किसी उद्दिष्ट लक्ष्य की ओर जुड़ जाना। इसलिए मन को रोकने की अपेक्षा, यह अधिक उपयुक्त है कि उसे अच्छी दिशा में जोड़ दिया जाए। स्थित मन का अर्थ हुआ। ठहरा हुआ मन, जिसे दमन द्वारा रोक लिया है, (अब वह बुराई में नहीं जाता ठीक है) परन्तु जब तक उसे अच्छे काम में युक्त न कर दोगे, जोड़ न दोगे, तब तक यही भय रहेगा कि कहीं यह पुनः बुराई में न जा लगे। जो युक्तमना नहीं उसका योग कभी सिद्ध नहीं हो सकता। वास्तव में प्रत्येक बात में युक्त होना ही योग है और ऐसा व्यक्ति ही योगी है। श्रीकृष्ण ने तो कहा ही है, **''युक्ताहारविहारस्य, युक्तचेष्टस्य कर्मसु। युक्तस्वप्नावबोधस्य, योगो भवति दुःखहा॥'' (गीता ६। १७)**

युक्त आहार-विहार वाले का, कर्म में युक्त चेष्टाशील का सोने-जागने में युक्त व्यक्ति का योग ही समस्त दुःखों का हरने वाला होता है। जो व्यक्ति युक्तमना नहीं, वह आहार-विहार में युक्त नहीं हो सकता; क्या कभी सम्भव है कि वह कर्म में युक्त चेष्टा वाला हो ? उसका तो सोना-जागना तक भी युक्त नहीं हो सकता। इसलिए शतपथकार सब लाभों का लाभ, सब सिद्धियों की सिद्धि, सब सुखों का सुख युक्त-मन को ही मानते हैं। स्वाध्याय से प्राप्त फल की घोषणा करते हुए कहा **''युक्तमना भवति''।**

जिसका मन अयुक्त है उसका तो कुछ भी नहीं। गीता (२।६६) में कहा है-**''नास्ति बुद्धिरयुक्तस्य न चायुक्तस्य भावना। न चाभायतः शान्तिरशान्तस्य कुतः सुखम्।''** अयुक्त व्यक्ति की बुद्धि ही ठिकाने नहीं रहती और न अयुक्त की कोई भावना ही होती है, न संकल्प ही बन पाता है। भावना नहीं तो शान्ति कहां ? शान्ति नहीं तो सुख भी कहां ? उसका तो सभी कुछ जाता रहता है। इसलिए स्वाध्याय का कोई अन्य फल आपको मिले व न मिले, मन को युक्त करने का अभ्यास तो होता ही है।

२. अपराधीनो भवति-

स्वाध्याय का दूसरा फल यह होता है कि मनुष्य पराधीन नहीं रहता, स्वाधीन हो जाता है। वह किसी भी प्रकार की गुलामी सहन नहीं कर सकता, दासता उसे असह्य हो जाती है। दासता के जुए को वह शीघ्रातिशीघ्र अपने कन्धे से उतार कर फेंक देता है, स्वाध्याय से उसे इतना विवेक तो हो ही जाता है।

अधीन शब्द का अर्थ है स्वामी के अधिगत होना-**इनं प्रभुम् अधिगतः अधीनः** और ऐसे व्यक्ति के स्वामित्व को स्वीकार कर लेना जो सर्वथा पर है, पराया है, पराधीनता कहलाती है। स्वाध्यायशील व्यक्ति, क्या आध्यात्मिक, क्या राष्ट्रीय और क्या सामाजिक, किसी प्रकार की अधीनता स्वीकार नहीं करता। परवश होना तो वह जानता ही नहीं, क्योंकि वह इसे दुःख मानता है, स्वभावतः अनात्मसत्ता के अधीन वह नहीं रह सकता। वह जानता है कि मैं चेतन हूं, अतः किसी जड़ तत्व की अधीनता स्वीकार नहीं कर सकता। वह इन्द्रियों के रूप, रस, गन्धादि विषयों के हाथों का खिलौना नहीं रहता, प्रत्युत उन्हें वह अपनी इच्छा पर चलाता और नचाता है। प्रकृति उसके हाथ का खिलौना होती है-पृथिवी, जल, तेज, वायु आदि जड़ शक्तियां उसका लोहा मानती हैं। स्वाध्याय से जब यह बोध हो जाता है कि मैं अमर हूं, उस अवस्था में तो, और तो और, मृत्यु भी हाथ बांधे आज्ञा-पालनार्थ खड़ी रहती है।

इसी प्रकार जब वह राष्ट्रीयता के क्षेत्र में उतरता है, तो विदेशी शासन की सत्ता को स्वीकार नहीं करता और उस जुए को उतार फेंकता है। वह किसी भी प्रकार की पराधीनता बर्दाश्त नहीं कर सकता। वह जान लेता है कि **''सर्वं परवशं दुःखम्''**, **''सर्वात्मवशं सुखम्''** परवश होना दुःख है और आत्मवश होना सुख है। अतः स्वाध्यायशील व्यक्ति-**''अपराधीनो भवति''।**

३. अहरहरर्थान् साधयतेः

स्वाध्याय के लाभ बताते हुए भगवान् याज्ञवल्क्य तीसरा लाभ **''अर्थ-लाभ''** बताते हैं। सांसारिक साधारण व्यक्ति हर बात में सौदेबाजी करता है। लाभों में भी पैसे के लाभ को ही सच्चा लाभ मानता है। वह कहता है कि जिसमें चार पैसे का लाभ न हुआ वह भी कोई सौदा है ? ऐसे व्यक्ति के लिए भी इसमें गुंजाइश है कि स्वाध्यायशील व्यक्ति को अर्थलाभ ही होता है। **''अहरहरर्थान् साधयते''** दिनों-दिन वह अर्थों की सिद्धि करता है।

परन्तु यहां अर्थ से अभिप्राय केवल स्थूल अर्थ ही न लेना चाहिए। वह भी एक अर्थ हो सकता है, परन्तु शतपथकार को जो वस्तु यहां अभीष्ट है, वह तो स्पष्ट है। (स्वाध्याय में आए हुए) किसी भी शब्द के पीछे जो-जो गहन अर्थ है उसकी सिद्धि कर लेना है।

स्वाध्यायशील व्यक्ति का विवेक सामर्थ्य इतना बढ़ जाता है कि वह शब्द की गहराई में जाकर उस अर्थ को निकाल लाता है, जिसकी सामान्य व्यक्ति कल्पना भी नहीं कर सकता। उसको वेद में आया हुआ ''अश्व'' शब्द केवल घोड़े का वाचक नहीं दिखता, अपितु राष्ट्र, काल, क्षत्र इत्यादि का वाचक दिखने लगता है उसके लिए ''गौ'' शब्द साधारण पशुमात्र का वाचक न दिखकर वाणी, किरण, पृथिवी, गतिशील पदार्थों का भी ज्ञापक दिखता है।

(क्रमशः)

श्रीकृष्ण जन्म अष्टमी पर्व मनाया

आर्य समाज, जालन्धर छावनी में श्रीकृष्ण जन्म अष्टमी का कार्यक्रम 17-8-2014 (रविवार) को धूमधाम से मनाया गया। प्रात: कालीन हवन हुआ जिसके ब्रह्मा श्री नन्द दुलाल जी थे। उन्होंने हवन के पश्चात् श्री कृष्ण के जीवन, कर्म योग नीति कुशलता पर सुन्दर ब्याख्यान किया।

रात्रि 8.30 से 10 बजे तक भजनों एवं प्रवचन के माध्यम से श्री सुरेन्द्र गुलशन जी ने सुचारू रूप से श्री कृष्ण जी की महानता एवं गुणों का वर्णन किया। इस पुण्य अवसर पर के. एल. गर्ल्ज हाई स्कूल के प्रधान श्री धर्मेन्द्र अग्रवाल जी Dr. Chief Engineer, P.S.E.B सपरिवार उपस्थित थे। इनके अतिरिक्त श्री चन्द्र गुप्ता प्रधान आर्य समाज, श्री जवाहर महाजन मंत्री आर्य समाज, श्री सुरेन्द्र लाला, श्री अशोक शर्मा, श्री अशोक जावेद, श्री गणपत जी सोनी, मनीष महाजन एवं अन्य सभासद एवं लोग भारी संख्या में उपस्थित रहे। इसमें स्त्री आर्य समाज ने भी बढ़-चढ़ कर भाग लिया। **-जवाहर लाल महाजन मंत्री आर्य समाज**

श्रीकृष्ण जन्म अष्टमी पर्व मनाया

आर्य समाज बठिण्डा की ओर से आर्य समाज चौक में श्री कृष्ण जन्माष्टमी के उपलक्ष्य में फ्रूट चाट का लंगर लगाया गया जो कि रात 7 बजे से 10 बजे तक चलता रहा। इस कार्यक्रम का सारा खर्चा दानी लोगों द्वारा किया गया। श्री नीरज टाटा ने 500 रूपए और श्री जुनेश सिंगला ने 2500 रूपए तथा बाकी सभी सदस्य और लोगों के सहयोग से सारा खर्चा पूरा हो गया। प्रोग्राम को सफल करने में श्री पी. डी. गोयल, श्री गौरी शंकर, श्री जगदीश बांसल, श्री रमेश कुमार, श्रीमती इन्द्रा छाबड़ा, श्रीमती सुशीला सुखीजा प्रधाना स्त्री समाज बठिण्डा का और भी कई सदस्यों का बहुत बड़ा योगदान रहा। लोगों ने आर्य समाज की बहुत प्रशंसा की। **-नवनीत कुमार महामन्त्री आर्य समाज**

श्रीकृष्ण जन्म अष्टमी पर्व मनाया

दिनांक 17-8-14 दिन रविवार को तलवाड़ा आर्य समाज में कृष्ण जन्माष्टमी बड़ी धूमधाम के साथ मनाई गई। प्रात: 8.30 बजे से 9.30 बजे तक हवन यज्ञ किया गया जिसमें आर्य समाज के सदस्य उपस्थित हुए। हवन यज्ञ के पश्चात् श्रीमती कृष्णा देवी के भजन हुए। भजनों के पश्चात् पुरोहित परमानन्द आर्य ने श्री कृष्ण जी के जीवन पर विचार रखे। श्री कृष्ण जी का सारा जीवन संघर्ष का जीवन रहा है। वे जब तक जिये धर्म और परोपकार के ही काम किए। उनका जन्म ही कैदखाने में हुआ। उनका लालन पालन गोकुल में हुआ। कंस जरासन्ध कालयमन शिशुपाल जैसे राक्षस वृत्ति के लोगों को मारा जिन्होंने देश में राक्षसवृत्ति फैला रखी थी। महाभारत के युद्ध में पांडवों को विजय दिलाई। दुर्योधन और दुशासन जैसे पापियों का नाश किया। उन्होंने गीता का उपदेश देकर संसार का बहुत भला किया। प्रवचन के पश्चात् शान्ति पाठ किया गया और प्रसाद वितरण किया गया। **-पुरोहित परमानन्द आर्य**

आर्य समाज पटियाला में नि:शुल्क मेडिकल कैम्प लगाया

आदरणीय श्री सुदर्शन शर्मा जी (प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा, पंजाब) की सत्प्रेरणा से आर्य समाज मन्दिर, पटियाला द्वारा दिनांक 17 अगस्त 2014 रविवार को ''बाला जी हार्ट इंस्टीच्यूट पटियाला'' के सहयोग से विशेष रूप से हृदय रोगियों के लिए नि:शुल्क मैडिकल कैम्प लगाया गया। कैम्प का शुभारम्भ वैदिक यज्ञ से हुआ। यज्ञ में डॉक्टर एवं उनके सहयोगी व आर्य समाज के सदस्यों ने ''सर्वे भवन्तु निरामया:'' की कामना से आहुतियां प्रदान कीं।

यज्ञोपरान्त हृदय रोग विशेषज्ञ डॉ० अरमदीप गर्ग व उनकी टीम ने कैम्प के दौरान आए हुए रोगियों की E.C.G., Sugar, B.P आदि की चैकिंग के साथ-साथ नि:शुल्क चिकित्सीय परामर्श प्रदान किया। इस शिविर में 100 (एक सौ) व्यक्ति लाभान्वित हुए।

प्रधान राजकुमार सिंगला ने इस पुनीत कार्य के लिए डॉक्टरों की टीम का धन्यवाद किया। इस अवसर पर जितेन्द्र राम, हर्षवर्धन, शेलेन्द्र मेहरा, गुलाब सिंह, प्रवीन कुमार, विजेन्द्र शास्त्री, शिवदास, पंडित ओंकारनाथ व अन्य आर्य समाज के पदाधिकारी तथा सदस्य उपस्थित थे। **-प्रचार मन्त्री**

आर्य समाज नवांकोट में जन्माष्टमी का पर्व मनाया गया

रविवार 17-8-14 को प्रात: 8 से 11 बजे तक आर्य समाज नवांकोट में जन्माष्टमी का पवित्र त्योहार डॉ० प्रकाश चन्द जी की प्रधानता में बड़ी श्रद्धा व हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। जिसमें हवन यज्ञ के पश्चात् श्री प्रेम प्रकाश प्रेम ''संगीत रत्न'' ने कार्यक्रम का शुभारम्भ ईश्वर भक्ति के भजनों से किया। श्री बालकिशन एडवोकेट, लक्षमण कुमार तिवारी, कीमती लाल, हरविन्द्र कुमार, निर्मल आर्य ने भजनों के माध्यम से श्रोताओं को लाभान्वित किया। दयानन्द आर्य माडल स्कूल के बच्चों ने भजनों के द्वारा भगवान श्री कृष्ण का स्तुति गान किया। आर्य स्त्री सभा का विशेष योगदान रहा। पंडित बनारसी दास आर्य ने ''आर्य समाज की दृष्टि में श्री कृष्ण का स्थान'' विषय पर अपने विचार प्रस्तुत किए जिसको लोगों ने खूब सराहा। श्री विनोद मदान, किशन लाल, भरत कुमार, सौरभ आर्य, शकुन्तला आर्य, सुदेश आर्य, शिवानी, सन्ध्या राज कुमार योगाचार्य, विजय आनन्द, अशोक लाहौरिया आदि का योगदान सराहनीय रहा। राज कुमार, श्रीमती लाल जी की ओर से फल आदि प्रसाद की सेवा करवाई गई। प्रधान डॉ० प्रकाश चन्द ने आर्य समाज हरीपुरा, आर्य समाज मेहरपुरा, आर्य समाज छोटा हरीपुरा से आए हुए ऋषि भक्तों का तथा सारी संगत का धन्यवाद किया। शान्ति पाठ के साथ कार्यक्रम का समापन हुआ।

-पंडित बनारसी दास आर्य मन्त्री

आर्य समाज हबीबगंज लुधियाना का वार्षिक उत्सव

आर्य समाज मंदिर हबीबगंज लुधियाना का 41वां वार्षिक उत्सव 13 और 14 सितम्बर 2014 को बड़ी धूमधाम से मनाया जा रहा है। इस अवसर पर आर्य जगत के उच्चकोटि के विद्वान आचार्य रामानंद जी शिमला वाले के वेद प्रवचन होंगे और श्री पंडित उपेन्द्र जी के भजन होंगे। आप सभी धर्म प्रेमी सज्जनों से निवेदन है कि आप अपने इष्ट मित्रों सहित इस अवसर पर पधार कर धर्म लाभ उठावें।

-मन्त्री आर्य समाज हबीबगंज, लुधियाना

आर्य मर्यादा के ग्राहक महानुभावों की सेवा में

आर्य मर्यादा साप्ताहिक निरन्तर आपकी सेवा में पहुंच रही है। जिन आर्य मर्यादा के ग्राहकों ने अभी तक अपना वार्षिक शुल्क या पिछला शुल्क नहीं भेजा है उनसे विनम्र प्रार्थना है कि वह अपना वार्षिक शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। आर्य मर्यादा का वार्षिक शुल्क मात्र 100/- रूपए है और आजीवन सदस्यता शुल्क 1000/- रूपए है। इसलिए मेरी सभी ग्राहक महानुभावों से प्रार्थना है कि वह अपना शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। इसके साथ ही आर्य समाजों के पदाधिकारियों एवं सदस्यों से भी निवेदन है कि वह अधिक से अधिक आर्य मर्यादा के ग्राहक बनाने में सहयोग करें। आशा है कि आप का सहयोग हमें प्राप्त होगा। **-व्यवस्थापक आर्य मर्यादा**

सभा से सम्बन्धित शिक्षा संस्थाओं के प्रिंसीपलों व अधिकारियों की सेवा में

मान्य महोदय/महोदया,

सादर नमस्ते।

दिनांक 19.5.2014 को एक परिपत्र द्वारा आप सबसे निवेदन किया गया था कि आप अपने विद्यालय में पढ़ रहे स्कूल स्तर के छात्र-छात्राओं को निम्नलिखित बातें कण्ठस्थ करवाने की व्यवस्था कीजिएगा।

1. गायत्री मंत्री अर्थ सहित।
2. आर्य समाज के दस नियम क्रमानुसार।
3. ईश स्तुति प्रार्थना व उपासना के आठ मंत्र क्रमानुसार।
4. शान्ति पाठ।

उपरोक्त कार्यक्रम को पाठयक्रम का एक भाग बना कर जो छात्र छात्राएं उपरोक्त मंत्रों तथा नियमों को 31.07.2014 तक कण्ठस्थ कर लेवें उन्हें मौखिक साक्षात्कार के बाद स्कूल स्तर पर सम्मानित किया जाए तथा तत्पश्चात् आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब अपने स्तर पर भी उन्हें पुरस्कृत करेगी। ऐसे बच्चों के नाम 31.7.2014 के तुरन्त बाद सभा कार्यालय को भेजने के लिए लिखा गया था लेकिन अभी तक आप के विद्यालय की तरफ से ऐसी सूचना सभा कार्यालय में प्राप्त नहीं हुई है। इसलिए आप से पुन: निवेदन है कि आप अपने विद्यालय के छात्र-छात्राओं के नाम 15 सितम्बर 2014 तक भिजवाने की व्यवस्था कीजिएगा। धन्यवाद सहित भवदीय

-प्रेम भारद्वाज महामंत्री, आर्य विद्या परिषद् पंजाब

वेदवाणी

परमेश्वर का मन्यु

समस्य मन्यवे विशो विश्वा नमन्त कृष्टयः॥
समुद्रायेव सिन्धवः॥

-ऋ० ८।६।४; साम० पू० २।१।५।३; अथर्व० २०।१०७।२

विनय-इन्द्र परमेश्वर जहां हमारे पिता है, उत्पादक और पालक हैं, वहां वे हमारे कल्याण के लिए रूद्र भी हैं, संहारकर्त्ता भी हैं। जब जगत में किसी स्थान पर संहार की आवश्यकता आ जाती है तो प्रभु अपने मन्यु को प्रकट करते हैं, मानो अपना तीसरा नेत्र खोल देते हैं, अपने तीसरे रूप को प्रकाशित करते हैं। उस कल्याणकारी शिव के मन्यु का तेज जब देदीप्यमान होने लगता है तो नाश होने योग्य सब संसार पतङ्गे की भांति आ-आकर उसमें भस्म होने लगता है; मन्यु का पात्र कोई भी व्यक्ति बच नहीं सकता, सब बहे चले आते हैं। देखो, समय-समय पर बड़े-बड़े संग्राम, दुष्काल या महामारी आदि रूपों में प्रभु का वह महाबल वाला मन्यु जगत् में प्रकट होता रहता है। सब मनुष्य अपने विनाश की ओर खिंचे चले जा रहे होते हैं, पर उन्हें यह मालूम नहीं होता। जैसे सब नदियां समुद्र की ओर बही चली जा रही हैं व उसमें जाकर समाप्त हो जाएंगी, लीन हो जाएंगी, उसी प्रकार प्रभु का मन्यु काल समुद्र बनकर उन सब प्राणियों को अपनी ओर खींचता जा रहा है, जिनका कि समय आ गया है। मनुष्यों के किए हुए पाप उन्हें विनाश की ओर वेग से खींचे ले जा रहे हैं। जिन्होंने इस संसार को तनिक भी तह के अन्दर घुसकर देखा है, वे देखते हैं कि किस-किस विचित्र ढंग से मनुष्य अपने मृत्युस्थल की ओर खिंचे चले जा रहे हैं। धन्य होते हैं अर्जुन-जैसे दिव्य दृष्टिपात पुरुष जिन्हें काल का यह आकर्षण दिखाई दे जाता है और जो देखते हैं कि **"यथा नदीनां बहवोऽम्बुवेगाः समुद्रमेवाभिमुखा द्रवन्ति। तथा तवामी नरलोकवीरा विशन्ति वक्त्राण्यभिविज्वलन्ति॥"** हम लोग तो मौत के मुंह में घुसे जा रहे होते हैं, परन्तु कुछ पता नहीं होता। हममें से अपनी शक्तियों का बड़ा गर्व करने वाले बड़े-बड़े प्रख्यात लोग जिस समय संसार को जितने अभिमान के साथ अपना पराक्रम दिखा रहे होते हैं, उसी समय वे उतने ही वेग से मृत्यु की ओर दौड़े जा रहे होते हैं; परन्तु उन्हें कुछ पता नहीं होता। जब उनका सब ठाठ एक क्षण में गिर पड़ता है, सामने मौत खड़ी दिखती है, तब जाकर प्रभु का रूद्ररूप उन्हें दिख पड़ता है। प्यारो! तब तुम अभी से क्यों नहीं देखते कि उसके मन्यु के सामने सब संसार झुका पड़ा है-पापी होकर कोई भी मनुष्य उसके सम्मुख खड़ा नहीं रह सकता-जिससे तुम अभी से उसके मन्यु का पात्र न बनने की समझ पा सको।

साभार-वैदिक विनय, प्रस्तुति-रणजीत आर्य

प्राचार्य/शिक्षकों की आवश्यकता

श्री गुरू विरजानन्द गुरूकुल महाविद्यालय, करतारपुर, ज़िला जालन्धर (पंजाब) में संस्कृत व्याकरण, वेद एवं दर्शन के अध्यापन हेतु आवासीय शिक्षकों के लिए प्रस्ताव आमंत्रित हैं। ऐसे व्यक्ति जो विद्यार्थियों के लिए जीवन का आदर्श प्रस्तुत कर प्रेरणा दे सकें तथा ब्रह्मचारियों के व्यक्तित्व में रूचि रखते हों, को अधिमान दिया जाएगा।

प्रार्थना पत्र अपने शैक्षिक विवरण के साथ अपना मोबाईल नम्बर भी लिखकर भेजें। मानदेय योग्यता अनुरूप तथा आवास एवं भोजन की व्यवस्था गुरूकुल की ओर से निःशुल्क होगी।

-प्रधान श्री गुरू विरजानन्द महाविद्यालय, करतारपुर ज़िला जालन्धर

श्री प्रेम भारद्वाज महामन्त्री, सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक द्वारा आर. के. प्रिंटर्स प्रैस, टाण्डा फाटक जालन्धर से मुद्रित होकर आर्य मर्यादा कार्यालय, गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा, जालन्धर से इसकी स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिए प्रकाशित हुआ। E-mail: apspunjab2010@gmail.com
आर्य मर्यादा में प्रकाशित सारी लेखन सामग्री से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं। प्रत्येक विवाद के लिए न्याय क्षेत्र जालन्धर होगा।